फरवरी 2019 मूल्य 15 रुपये

रूपरेखा

सदाचार ~ सद्विचार ~ सत्संस्कार

वीणा-वादिनी, वर दे
हमारे मानस ज्ञानामृत से भर दे।

रूपरेखा

सदाचार ~ सद्विचार ~ सत्संस्कार

मार्गदर्शन :
पूज्या प्रवर्तिनी साध्वी मंजुलाश्री जी

संयोजना :
साध्वी कनकलता
साध्वी वसुमती

परामर्शक :
श्रीमती मंजुबाई जैन

प्रबंध संपादक :
अरुण कुमार पाण्डेय

सम्पादक :
श्रीमती निर्मला पुगलिया

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये
आजीवन शुल्क : 3000 रुपये

प्रकाशक
अरूण तिवारी
मानव मंदिर मिशन ट्रष्ट (रजि.)
पोस्ट बॉक्स नं. : 3240
सराय काले खाँ बस टर्मिनल के सामने,
नई दिल्ली - 110013
फोन नं. : 26345550, 26821348
Website : www.rooprekha.com
E-mail : contact@manavmandir.info

इस अंक में

औरों की खुशी में किया गया त्याग जीवन को सुखमय बना सकता है

इसी सच्चाई की गहराई में जाते हुए भगवान् महावीर ने त्याग-मूलक जीवन-प्रणाली का विधान दिया। उपनिषद के ऋषियों ने कहा- तेन त्यक्तेन भुंजीथाः यानी त्यागपूर्वक भोग। यह पूरब की देन है जबकि पश्चिम कहता है भोगपूर्वक त्याग। त्यागमूलक जीवन-प्रणाली में भौतिक-दृष्टि से कुछ न होते हुए भी आप सम्राट का जीवन जिएंगे। भोगमूलक प्रणाली में भौतिक समृद्धि के बावजूद भिखारी की तरह रहने के लिए विवश होंगे। इसलिए हम विज्ञान-प्रदत्त भौतिक समृद्धि की अंधी दौड़ में अपनी त्याग-प्रधान जीवन-प्रणाली को न भूलें। 05

संस्कृति का मूर्त रूप नारी

आज की पढ़ी-लिखी माताएं बच्चों में संस्कार तो भरती हैं पर उनमें कुछ अधूरापन रह जाता है। क्योंकि वे शिक्षा के, देश-सेवा के, बहादुरी के, खेल-कूद के, देश-विदश-भ्रमण व स्वच्छता के संस्कार तो भरती हैं पर विरक्ति, विनम्रता, उदारता, भ्रातृ-भाव, नैतिकता और ईमानदारी के संस्कार भरने की ओर उनका ध्यान नहीं जाता। फलस्वरूप देश के बच्चों का बाह्य विकास तो पर्याप्त मात्रा में हो जाता है पर आन्तरिक विकास नहीं हो सकता। 08

हंस अकेला

'मैं शास्त्रों अथवा निश्चित नियम अभ्यासों- साधना पद्धतियों के समर्थन में नहीं हूं। यह सत्य है। क्योंकि मेरा अभिमत है कि सत्य का अनुभव शब्दों-शास्त्रों से नहीं, अनुभव से ही संभव है। पर उन संकेतों के बड़े खतरे ये हैं कि वे हमें धारणाग्रस्त बनाते हैं। हमारी खोज-हमारी तपस्या, साधना सत्य या आत्मा के साक्षात् अनुभव के लिए नहीं, उन अवधारणाओं के साक्षात्कार में लग जाती है।' 12

विश्व वसन्त में सरस्वती

जब खेतों में सरसों खिलती है तब उसकी वासन्ती रंग में देख के जवान और किसान झूम उठते हैं। कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान के कंठ से फूट पड़ता है। फूली सरसों ने दिया रंग, वीरों का कैसा हो वसंत। वसन्त उल्लास, उमंग, आशा और शौर्य जगाता है ताकि हम आतंकवाद से देश की रक्षा कर सकें। सरस्वती विद्या की देवी है जो हमें विज्ञान और कविता शक्ति की प्रेरणा देती है। 21

संत-वाणी

तुलसी दया न पार की, दया आपकी होय।
तूं किणने मारे नहीं, तो तने न मारे कोय।।

बोध-कथा

धर्म-कर्म का उद्देश्य

काशी में गंगा के किनारे एक संत का आश्रम था। उसमें कई शिष्य अध्ययन करते थे। आखिर वह दिन आया जब शिक्षा पूरी होने के बाद गुरुदेव उन्हें अपना आशीर्वाद देकर विदा करने वाले थे। सुबह गंगा में स्नान करने के बाद गुरुदेव और सभी शिष्य पूजा करने बैठ गए। सभी ध्यानमग्न थे कि एक बच्चे की 'बचाओ बचाओ' की आवाज सुनाई पड़ी। बच्चा नदी में डूब रहा था। आवाज सुनकर गुरूदेव की आंखे खुल गईं। उन्होंने देखा कि एक शिष्य पूजा छोड़ बच्चे को बचाने के लिए नदी में कूद गया। वह किसी तरह बच्चे को बचाकर किनारे ले आया, लेकिन दूसरे शिष्य आंखे बंद किए ध्यानमग्न थे। पूजा खत्म होने के बाद गुरूदेव ने उन शिष्यों से पूछा- 'क्या तुम लोगों को डूबते हुए बच्चे की आवाज सुनाई पड़ी थी?' शिष्यों ने कहा, 'हां गुरूदेव, सुनी तो थी।' गुरूदेव ने कहा- 'तब तुम्हारे मन में क्या विचार उठा था?' शिष्यों ने कहा- 'हम लोग ध्यान में डूबे थे। दूसरी तरफ ध्यान देने की बात मन में उठी ही नहीं।' गुरूदेव ने कहा- 'लेकिन तुम्हारा एक मित्र बच्चे को बचाने के लिए पूजा छोड़कर नदी में कूद पड़ा।' शिष्यों ने कहा- 'उसने पूजा छोड़कर अधर्म किया है।' इस पर गुरूदेव ने कहा- 'अधर्म उसने नहीं, तुम लोगों ने किया है।

तुमने डूबते हुए बच्चे की पुकार अनसुनी कर दी। पूजा-पाठ, धर्म-कर्म का एक ही उद्देश्य होता है प्राणियों की रक्षा करना। तुम आश्रम में धर्मशास्त्रों, व्याकरणों, धर्म-कर्म आदि में पारंगत तो हुए, लेकिन धर्म का सार नहीं समझ सके। परोपकार और संकट में फंसे दूसरे की सहायता करने से बड़ा कोई धर्म नहीं। पूजा पाठ का असल संदेश है कि हम दूसरे की मदद करें।' गुरूदेव ने उस शिष्य को अपना आशीर्वाद देकर आश्रम से विदा किया जिसने डूबते हुए बच्चे को बचाया था। शेष शिष्यों से कहा- 'अभी तुम्हारी शिक्षा अधूरी है।'

एक ही नदी में दुबारा उतरना असंभव है

मैंने आपको गाली दी। जब आप मुझे गाली लौटाते हैं, तो यह गाली उसी आदमी को नहीं लौटती जिसने आपको गाली दी थी। लौ को तो समझना आसान है कि सांझ जलाई थी और सुबह जिसे बुझाया था लेकिन यह जो जरा की धारा है, इसको समझना मुश्किल है। आप उसी को गाली नहीं लौटा सकते, जिसने आपको गाली दी थी। वहां भी जीवन क्षीण हो रहा है। वहां भी लौ बदलती जा रही है। जिसने आपको गाली दी थी, अब वह आदमी नहीं है वहां, अब वहां उसकी संतति है। उसी धारा में एक नई लौ है। हम कुछ भी लौटा नहीं सकते। लौटाने का कोई भी उपाय नहीं है, क्योंकि जिसको लौटाना है, वह वही नहीं है। बदल गया है।

हेरॉक्लीट्स ने कहा है- एक ही नदी में दुबारा उतरना असम्भव है। निश्चित ही असम्भव है, क्योंकि दुबारा जब आप उतरते हैं, तो वह पानी बह चुका होता है, जिसमें आप पहली बार उतरे थे। हो सकता है अब सागर में हो वह पानी, हो सकता है अब बादलों में पहुंच गया हो, हो सकता है फिर गंगात्री में गिर रहा हो, लेकिन अब उस पानी से मुलाकात आसान नहीं है दुबारा। और अगर हो भी जाये, तो आपके भीतर की भी जीवन-धारा बदल रही है, अगर वह पानी दुबारा मिल भी जाये, तो जो उतरा था नदी में बह आदमी नहीं मिलेगा दुबारा।

दोनों नदी है। नदी भी एक नदी है और आप भी एक नदी। आप भी एक प्रवाह है। सारा जीवन एक प्रवाह है। इसको महावीर कहते हैं- 'जरा।' इसका एक छोर जन्म है और दूसरा छोर मृत्यु है। जनम में ज्योति पैदा होती है, मृत्यु में उसकी संपति समाप्त होती है। इस बीच के हिस्से को हम जीवन कहते हैं, जो कि क्षण-क्षण बदल रहा है।

यह प्रवाह इतना तेज है कि इसमें पैर रोक कर खड़ा होना भी मुश्किल है। हालांकि हम सब खड़े होने की कोशिश करते हैं। जब हम एक बड़ा मकान बनाते हैं, तो हम इस ख्याल से नहीं बनाते कि कोई और इसमें रहेगा? कभी कोई ऐसा आदमी देखा है, जो मकान बनाता हो कि कोई ओर इसमें रहेगा? नहीं, आप अपने लिए मकान बनाते हैं, तो हम इस ख्याल से नहीं बनाते कि कोई और इसमें रहेगा। कभी कोई ऐसा आदमी देखा है, जो मकान बनाता हो कि कोई ओर इसमें रहेगा? नहीं, आप अपने लिए मकान बनाते हैं, लेकिन सदा आपके बनाये मकानों में कोई और रहता है। आप अपने लिए धन इकट्ठा करते हैं, लेकिन सदा आपका धन किन्हीं और के हाथों में पड़ता है। जीवन भर जो आप चेष्टा करते हैं, उस चेष्टा में कहीं भी पैर थमने का कोई उपाय नहीं है। जहां हम खड़े होने की चेष्टा कर रहे थे, वहां कोई ओर खड़ा होता है! वह भी खड़ा नहीं रह पाता! कोई और...कोई और...!

यह बड़ी मजे की बात है कि हम सब दूसरों के लिए जीते हैं।

प्रस्तुति : निर्मला पुगलिया

पूज्य गुरुदेव के प्रवचन-सारांश

○ रुचि आनंद

औरों की खुशी में किया गया त्याग जीवन को सुखमय बना सकता है

हर आदमी की इच्छा होती है कि वह सुखपूर्वक रहे। इसलिए उसकी छोटी-बड़ी, सारी क्रियाएं सुखमय जीवन के लिए होती हैं। भगवान् महावीर के शब्दों में, 'सुह साया दुक्ख पडिकुला' यानी समस्त प्राणी सुख चाहते हैं, दुःख कोई भी नहीं चाहता। लेकिन प्रश्न है कि सुख-शांति मिले तो कैसे? इसका एक सीधा सा उत्तर है, इच्छाओं-कामनाओं की पूर्ति से संभव है। किन्तु कोई बताए कि इच्छाओं का कहीं अंत है। एक इच्छा पूरी होते ही दूसरी जाग जाती है। इच्छाओं पर इच्छाएं, अशांति वैसी की वैसी। भूल जाते हैं कि इच्छाओं से मिलने वाला वस्तु-सुख, बार-बार के मिलने से वही दुःख का कारण बन जाता है। जिस मिठाई से जीभ को सुख मिलता है, वही मिठाई अधिक मात्रा में खाने से दुःख का कारण बन जाती है। इसका अर्थ है कि वह असली सुख नहीं, सुख का भ्रम है।

इसी सुख-शांति को खोजते-खोजते मनीषियों ने पाया कि असली सुख-शांति भोग में नहीं, त्याग में है। कल्पना करें, आपके सामने जादू की दो छड़ी हो, एक सुख देने वाली और दूसरा दुःख देने वाली। इनमें एक आपको अपने पर घुमानी है और दूसरी पूरे शहर पर तो क्या करेंगे? जाहिर है कि आप सुख की छड़ी ही लेंगे। हर कोई वही लेना चाहेगा। मैंने यह प्रश्न सैकड़ों बार पूछा, हर बार यही उत्तर मिला। हर कोई यहीं आकर चूक जाता है और अनजाने ही दुःख को आमंत्रण दे देता है।

यह हम सबके सोचने की बात है कि सुख की छड़ी तो हमें अकेले को मिलेगी और दूसरी छड़ी के शाप से सारा नगर दुःख में डूबेगा। क्या इससे हम सुखमय जीवन जी सकते हैं? हजार आंखों में तकलीफ, दर्द और आंसू हों, वहां एक चेहरे

पर क्या मुस्कान आ सकती है। इसे उलट कर देखें, आप पूरे नगर के लिए सुख की छड़ी का त्याग कर देते हैं, उस स्थिति में हजारों परिवारों की मुस्कान के बीच क्या एक परिवार की आंखों आंसू रह सकते हैं? यह तभी संभव है जब हम अपने मन को कड़ा कर त्याग की हिम्मत दिखाएं, पाएंगे कि सब तरफ खुशियां ही खुशियां हैं।

इसी सच्चाई की गहराई में जाते हुए भगवान् महावीर ने त्याग-मूलक जीवन-प्रणाली का विधान दिया। उपनिषद के ऋषियों ने कहा- तेन त्यक्तेन भुंजीथाः यानी त्यागपूर्वक भोग। यह पूरब की देन है जबकि पश्चिम कहता है भोगपूर्वक त्याग। त्यागमूलक जीवन-प्रणाली में भौतिक-दृष्टि से कुछ न होते हुए भी आप सम्राट का जीवन जिएंगे। भोगमूलक प्रणाली में भौतिक समृद्धि के बावजूद भिखारी की तरह रहने के लिए विवश होंगे। इसलिए हम विज्ञान-प्रदत्त भौतिक समृद्धि की अंधी दौड़ में अपनी त्याग-प्रधान जीवन-प्रणाली को न भूलें। अपने एक परिवार की मुस्कान के लिए हजारों आंखों के आंसू को न भूल जाएं। अनुकंपा, करुणा, सेवा, दान ये सब इसी त्याग के अंग हैं।

<u>अवसर कभी दस्तक नहीं देता</u>

<u>प्रेरणा लेकर आगे बढना सीखें</u>

कुछ लोग अक्सर यह कहते हुए दिखाई देते हैं कि माहौल बहुत खतरनाक हो चुका है और जीवन जीना मुश्किल होता जा रहा है। यह कोई आज की नहीं, हमेशा की आशंका है, जो प्रवृत्ति का रूप ले चुकी है। वह अपनी सत्ता को बचाने की लड़ाई में समाज पर डर थोपती है और लोगों में असुरक्षा की भावना बनाए रखना श्रेयस्कर समझती है। डरे हुए लोग यह समझने की कोशिश नहीं करते कि ऐसे माहौल को सृजित करने का काम हममें से ही कुछ लोग करते हैं। इसे बदला जा सकता है बशर्ते हम अपनी ताकत की पहचान कर लें। इससे न केवल वर्तमान को संवारा जा सकता है, भविष्य की आशंका को भी निर्मूल किया जा सकता है।

रॉबर्ट एच. शुलर ने बड़ी अच्छी बात कही है कि 'सपनों में विश्वास कीजिए, आघातों में नहीं। निराशा के अनुभव को अपने भविष्य को आकार देने की अनुमति न दें। 'वस्तुतः निराशा खुद के प्रति अविश्वास है जो अस्थिर और अशांत करती है। सकारात्मक नहीं बनने नहीं देती है। हर किसी को मालूम है कि सकारात्मक विचार में अच्छाई की असंख्य संभावना छिपी रहती है, सिर्फ उसे जगाने और विकसित करने की आवश्यकता है। हालांकि इसे जगाने में बहुत सारे लोग लगे हुए हैं और वे सफल भी हो रहे हैं।

किसी ने बताया कि देश के अलग-अलग हिस्सों के कुछ नौजवानों ने अपनी अच्छी-खासी नौकरियां छोड़कर 'मिलीयनजीनी' नाम का एक ऐसा ऐप्प शुरू किया जो रक्त की कमी झेल रहे लोगों की मदद कर सके। इन लड़के-लड़कियों ने अपने एक मित्र के पिता को रेयर ग्रुप के ब्लड की कमी के कारण चेन्नेई के अस्पताल में जीवन और मौत के बीच झूलते देखा तो सभी तड़प उठे। सबके जेहन में यह बात कौंधने लगी कि महानगर में यह हालत है तो गांवों में क्या हो रहा होगा। सबने मिलकर उसी दिन यह फैसला कर लिया कि रक्त-संकट को दूर करने का कोई आधुनिक तरीका निकालेंगे। इन्हें किसी ने भी बाध्य नहीं किया बल्कि तड़प ने प्रेरणा दी कि मनुष्य होने का फर्ज अदा करो। इन सबने न तो माहौल को कोसा और न सरकार को गालियां निकाली, अपने स्तर से इंसानियत के लिए एक-दूसरे का हाथ थामा और चल पड़े अपने रास्ते पर।

ऐसा हर कोई कर सकता है। मुसीबत में पड़े इंसानों की मदद कर हम भी अद्‌भूत साबित हो सकते हैं।

बस, आपके मन में जिद्द और संवेदना होनी चाहिए। इसके लिए समय का इंतजार नहीं करना होता है। कहा ही जाता है कि अवसर दस्तक नहीं देता है, जब आप दरवाजे को पीटते हैं तभी वह खुद को प्रस्तुत कर देता है। अपना नजरिया बदलें। देखेंगे कि आपके आसपास का माहौल वह नहीं है, जो आपके मन में है।

कविता

❍ आचार्य रूपचन्द

एक सितारा टूटने से गगन खाली नहीं होता,
एक फूल के झरने से चमन खाली नहीं हाता,
आज तक यहां कितने आबाद हुए, उजड़ गए,
फिर भी इस धरती का दामन खाली नहीं होता।

संस्कृति का मूर्त रूप नारी

○ प्रवर्तिनी साध्वी मंजुलाश्री

नारी के योगदानों की कहानी बहुत लम्बी है। भारतीय संस्कृति नारी की सेवाओं का मूर्त रूप है। इस देश की संस्कृति का ज्ञान और दर्शन पक्ष यदि पुरुषों से निखरा है तो कला पक्ष नारियों ने चमकाया है।

कला एक ऐसा शब्द है जिसकी सीमा से बाहर कोई विषय रहता ही नहीं है। वस्तुतः दर्शन और विज्ञान भी जीवन की एक कला है। फिर भी इसमें चिन्तन की प्रधानता है, जब कि कला पर भावना-प्रधान होती है। इस दृष्टि से स्त्री को कला की प्रतिमूर्ति कहा जाता है। चूंकि वह भावना-प्रधान व्यक्तित्व है। भावना से निष्पन्न जितनी भी कलाएं हैं वे सब नारी की देन हैं। नारी व्यक्तित्व का अस्तित्व नहीं होता तो संगीत, नृत्य, वाद्य, चित्रलिपि आदि कलाओं का लोप ही हो जाता या फिर अधूरापन अवश्य रहता।

नारी में सबसे बड़ी कला अगर है तो धर्म कला है। धार्मिक और सामाजिक परम्पराओं की अक्षुण्णता का श्रेय अगर किसी को है तो वह महिला समाज को है। स्त्रियां श्रद्धा की प्रतिमूर्ति होती हैं। वे जितनी निष्ठा और लगन से अपनी शालीन परम्पराओं का निर्वहन करती हैं, उतना एक पुरुष कदापि नहीं कर सकता है। धर्म-नेताओं ने, समाज-सुधारकों ने और देश के कर्णधारों ने जो भी जीवन-विकास के सूत्र दिये उनको पहली क्रियान्विति देने वाला नारी समाज ही है।

केवल बाह्य कला से ही नारी समाज सम्पन्न नहीं है। उसमें आन्तरिक कला भी है। वह कैसे किसी क्रूर से क्रूर व्यक्ति का दिल जीत लेती है, यह एक उदाहरण से स्पष्ट है। अभी-अभी एक इंडियन एरोप्लेन गुण्डों द्वारा अपहरण किया गया और लाहौर ले जाया गया। उसमें रहने वाली परिचारिका ने अपने मधुर व्यवहार और कलापूर्ण पद्धति से अपहरणकर्ताओं के लीडर को भाई बना लिया। सैकड़ों

व्यक्तियों को उनके कठोर दमन से मुक्त किया। यह शक्ति पुरुष में नहीं है। वह लड़ तो सकता है पर स्नेह से किसी के दिल को नहीं जीत सकता।

बच्चों का निर्माण भी महिला जगत् ही कर सकता है। जिन बच्चों का पालन-पोषण प्रारम्भ से पुरुषों के संरक्षण में होता है उनमें समुचित विकास नहीं हो सकता। जिन बच्चों को माता का संरक्षण प्राप्त होता है उनमें सामाजिक तत्त्वों का पर्याप्त विकास होता है। जो माताएं अपने बच्चों में प्रारम्भ से ही साहस, अभय, विनम्रता, शालीनता, सहानुभूति, सेवा-भावना, धार्मिकता, नैतिकता, प्रामाणिकता और देशभक्ति के संस्कार भरती हैं वे बच्चे बड़े होनहार होते हैं। दुनिया में जितने भी महापुरुष हुए हैं उनमें से अधिकांश माताओं के द्वारा प्रदत्त संस्कारों से हुए हैं। जो माताएं अपने बच्चों में सद्-संस्कार नहीं भरतीं, उनका दुष्परिणाम स्वयं उन माताओं को ही भोगना पड़ता है।

एक बच्चे में बचपन से ही चोरी के संस्कार पड़ गये। मां ने उसको रोका नहीं अपितु चोरी की चीजें बड़ी खुश होकर लेती। जब बच्चा पुलिस के द्वारा कैद कर लिया गया और उससे उसकी अन्तिम इच्छा के बारे में पूछा गया तो उसने मां से मिलने की इच्छा व्यक्त की। जब मां आयी तो बच्चे ने अपना मुंह मां के मुंह के पास ले जाते हुए झट से मां की नाक काट ली। पूछने पर बताया कि मेरे में बुरे संस्कार डालने का एकमात्र कारण मेरी मां है। इसलिए में अपनी चोरी के दण्ड को सबसे पहले मां को भोगना चाहता हूं।

आज की पढ़ी-लिखी माताएं बच्चों में संस्कार तो भरती हैं पर उनमें कुछ अधूरापन रह जाता है। क्योंकि वे शिक्षा के, देश-सेवा के, बहादुरी के, खेल-कूद के, देश-विदश-भ्रमण व स्वच्छता के संस्कार तो भरती हैं पर विरक्ति, विनम्रता, उदारता, भ्रातृ-भाव, नैतिकता और ईमानदारी के संस्कार भरने की ओर उनका ध्यान नहीं जाता। फलस्वरूप देश के बच्चों का बाह्य विकास तो पर्याप्त मात्रा में हो जाता है पर आन्तरिक विकास नहीं हो सकता।

रानी मदालसा अपने पुत्रों को जन्मते ही ऐसी लोरी दिया करती थी कि-

सिद्धोसि बुद्धोसि निरंजनोसि संसार माया परिवर्जितोसि।
संसार स्वप्न त्यज मोह निंद्रा मदालसा वाच मुवाच पुत्रं।।

और इस लोरी का परिणाम यह आया कि सारे के सारे राजकुमार संन्यासी बन गये। अन्त में जब उसके एक लड़का और हुआ तो उसका पालन-पोषण किसी घाय से

करवाया कि कहीं यह भी माता की धर्म-प्रधान लोरी से संन्यासी न बन जाए और राज्यभार संभालने की समस्या खड़ी न हो जाए। इस घटना से स्पष्ट है कि मां के संस्कार कितना काम करते हैं। यह संस्कार-दान माताएं ही कर सकती हैं। पिता ऐसी सेवा कभी नहीं कर सकता। माताओं की बदौलत ही देश की संस्कृति सुरक्षित रहती है।

आज अपेक्षा है माताएं संतानों में अध्यात्म और योग के कुछ संस्कार भी भरें। कुछ उदारता, सहिष्णुता, परमार्थ, सद्भावना और समता के संस्कार भी भरें जिससे जीवन का बाह्य और आन्तरिक पक्ष बलवान हो।

चुटकुले

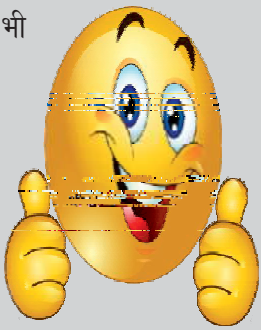

(1) जज चोर से- तुम शादीशुदा हो, शरीफ हो, फिर भी तुमने एक ही दुकान में लगातार तीन बार चोरी क्यों की?
चोर- जज साहब! चोरी तो मैंने एक ही बार की है बाकी दो बार तो पत्नी के कहने पर साड़ी का रंग बदलने गया था।

(2) बंटू- 'जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है, दिन-प्रतिदिन इंसान रईस बनता जाता है।'
घंटु- 'वो कैसे?'
बंटू- बूढ़े होने पर चांदी बालों में, सोना दाँतों में, मोती आखों में, शुगर खून में और महंगे पत्थर किडनी में पाए जाने लगते हैं।'

(3) Teacher : एक टोकरी में 10 आम थे 3 सड़ गए तो कितने आम बचे?
बन्टू- 10
Teacher : अबे मूर्ख 10 कैसे बचेंगे?
बन्टू- सड़े हुए आम कहां जाएंगे, सड़ने से केले थोड़ी बन जाएंगे।

(4) पप्पू जंगल में जा रहा था तभी एक सांप ने पैर पर काट लिया।
पप्पू को गुस्सा आया और टांग आगे करके बोला, 'ले काट ले जितना काटना है काट ले।'
सांप ने फिर तीन-चार बार काटा और थक कर बोला, 'अबे तू इंसान है भूत?'
पप्पू, 'मैं तो इंसान ही हूं लेकिन साले मेरा यहां पैर नकली है।'

प्रस्तुति : मनीष

हंस अकेला

{उपन्यास-शैली में आचार्यश्री रूपचन्द्र की जीवन-गाथा}

❍ डॉ. विनीता गुप्ता

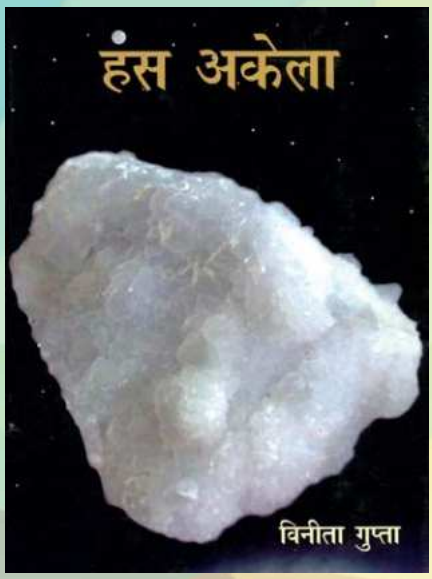

गतांक से आगे-

श्री कृष्णमूर्ति से भेंट के लिए विशेष प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। कमरे के भीतर द्वार से उनका आगमन हुआ। लम्बे इकहरे शरीर पर ढीला-सा चोला और पतलून। भगवां, श्वेताम्बर, पीताम्बर जैसा संन्यास का कोई बाना नहीं। न गले में रुद्राक्ष या माथे पर तिलक जैसा धर्म का कोई बाहरी चिन्ह। वे आये और सहज भाव से वहीं चटाई पर पालथी मार कर बैठ गये। पाँच मिनट में औपचारिक परिचय पूरा हो गया। उसके बाद मुनि जी ने जिज्ञासा शांत करने के लिए पहला प्रश्न किया-

'आत्मानुभव के लिए आप किसी भी निश्चित साधना, परम्परा, योगाभ्यास, जप, प्राणायाम आदि के समर्थन में नहीं हैं, ऐसा हमने सुना है। क्या यह सही है?'

इस प्रश्न के उत्तर में श्री कृष्णमूर्ति ने प्रश्न किया- 'आप जिस आत्मा की चर्चा करते हैं। क्या उसके बारे में आप जानते हैं?'

मुनि जी ने कहा, 'जो अरूप है, चेतना युक्त है, सुख-दुःख का अनुभव करती है। न जिसका जन्म होता है, न मरण। जो अनंत ज्ञान और आनंद-स्वरूप है। वह आत्मा है।'

उनका अगला प्रश्न था- 'आत्मा के जिस स्वरूप की चर्चा आपने की है, क्या उसका अनुभव किया?'

मुनि जी क्षणभर ठिठके। फिर बोले- 'आत्मा के उस अनुभव के लिए ही मैंने साधना का मार्ग लिया है।'

'बहुत ठीक,' वे बोले। 'इसका अर्थ है कि आत्मा का अनुभव आपने अभी तक नहीं लिया है। फिर जिस आत्मा के स्वरूप

की चर्चा आपने की, उसका आधार क्या है? आपने कैसे जाना कि आत्मा का यह स्वरूप है?'

यह सच था कि अभी तक मुनि जी को आत्मा का अनुभव नहीं हुआ था। उन्होंने कृष्णमूर्ति जी के प्रश्न के उत्तर में कहा- 'उसका आधार वे शास्त्र हैं, जिनकी रचना सर्वज्ञ अर्हत् पुरुषों ने की। जो आत्माएं तपस्या-साधना के द्वारा अर्हत् अवस्था को उपलब्ध होती हैं, अपने अनुभवों को वे शब्दात्मक भाषा में प्रकट करती हैं। अल्पज्ञ व्यक्तियों के लिए वे शास्त्र बन जाते हैं। शास्त्रों के वे निर्देश ही आत्मा-परमात्मा जैसे तत्वों को जानने का आधार बनते हैं। उसी आधार पर मैंने आत्मस्वरूप की चर्चा की है।'

यह सुनकर वे मुस्कराये। फिर आत्मीयता से मुनि जी का हाथ अपने हाथों में लेते हुए बोले- 'मुनि जी, आप स्वयं सोचें, क्या आत्मानुभव की अभिव्यक्ति शब्दों में संभव है? अनुभव तो अनुभव से ही संभव होता है। जब उस अनुभव को शब्दों द्वारा प्रकट करने की कोशिश होती है, तो वह कोशिश मात्र इशारा होती है। उन शब्दों से परम सत्य की अभिव्यक्ति बिल्कुल असंभव है। वह शब्दों का विषय है ही नहीं। फिर भी ज्ञानी द्वारा अभिव्यक्ति का प्रयास इसलिए होता है, क्योंकि उसके पास वही एकमात्र साधन है, और वही शास्त्र का रूप धारण कर लेता है।'

वे बोलते जा रहे थे। मुनि जी ध्यान से सुनते जा रहे थे। किन्तु यहां तक आते-आते हम कई भ्रमों के शिकार हो जाते हैं। हम शास्त्र के उन इशारों को ही सत्य की सम्पूर्ण अभिव्यक्ति मान लेते हैं। उसको ही अंतिम प्रमाण मानते हुए दूसरे शास्त्रों के विरुद्ध खड़े हो जाते हैं। आत्मा-परमात्मा का अनुभव न होते हुए भी उन शब्दों-शास्त्रों की व्याख्या हम करने लगते हैं, जबकि समझ का सम्बन्ध एकान्ततः बुद्धिपरक होता है अनुभव का क्षेत्र बुद्धि के परे है। उस समझ के अनुसार हम अपने अवचेतन में एक अवधारणा निर्मित कर लेते हैं। फिर उस अवधारणा को ही अंतिम सत्य मानते हुए उसे सिद्ध करना शुरू कर देते हैं। इसी के आधार पर मतवादों का सिलसिला शुरू होता है।'

'सबसे अधिक दुःखद पहलू तो यह है कि हमारी सारी तपस्याएं और साधनाएं उस अवधारणा को साक्षात् करने में लग जाती हैं। वास्तविक सत्य हमारे हाथ से फिसल जाता है। यही कारण है कि एक जैन को भगवान के दर्शन महावीर के रूप में, एक हिन्दू को राम या कृष्ण के रूप में होते हैं। एक बौद्ध को बुद्ध के रूप में, मुसलमान को मोहम्मद के रूप में और एक ईसाई को

क्राइस्ट के रूप में होते हैं। आप बताएं, इन अलग-अलग रूप-आकारों के साथ आत्मा या परमात्मा का संबंध क्या है? फिर भी उनके रूपाकारों में दर्शन इसलिए होते हैं, क्योंकि अपने अवचेतन में हमने परमात्मा की निश्चित रूपाकारों में अवधारणाएं निर्मित कर रखीं हैं।'

मुनि जी इस प्रसंग में गहरे उतरते जा रहे थे। कुछ रुक कर कृष्णमूर्ति फिर बोले-

'मैं शास्त्रों अथवा निश्चित नियम अभ्यासों- साधना पद्धतियों के समर्थन में नहीं हूं। यह सत्य है। क्योंकि मेरा अभिमत है कि सत्य का अनुभव शब्दों-शास्त्रों से नहीं, अनुभव से ही संभव है। पर उन संकेतों के बड़े खतरे ये हैं कि वे हमें धारणाग्रस्त बनाते हैं। हमारी खोज-हमारी तपस्या, साधना सत्य या आत्मा के साक्षात् अनुभव के लिए नहीं, उन अवधारणाओं के साक्षात्कार में लग जाती है।'

मुनि जी और गहरे उतरना चाहते थे। बोले- 'यह काफी हद तक सही है कि शब्दों से प्राप्त ज्ञान चित्त को धारणाग्रस्त बनाता है। अवचेतन में वे धारणाएं-अवधारणाएं वस्तु सत्य के अनुभव में बाधा भी बनती। है किन्तु शब्द-शास्त्र उस अज्ञात की सूचना भी देते हैं, जिनका हमें ज्ञान नहीं है। क्या वे सूचनाएं कम महत्वपूर्ण होती हैं? आदमी किसी भी अनुभव को उपलब्ध करने के लिए आरंभ में क्या उन सूचनाओं का ही सहारा नहीं लेता है? यह ठीक है कि अनुभव के अभाव में वे सूचनाएं हमारे अवचेतन में कुछ अवधारणाएं निर्मित करती हैं। किन्तु हमारे कदम मंजिल की और जैसे-जैसे आगे बढ़ते हैं, हमारी दृष्टि, हमारी दिशाएं और हमारे यात्रा-अनुभव वैसे-वैसे स्पष्ट होते चले जाते हैं। हमारी पूर्व धारणाएं स्वयं आश्वस्त अथवा निरस्त होती चली जाती हैं। इस प्रकार ये शास्त्र-सूचनाएं ही हैं, जो हमें अज्ञान से ज्ञान की ओर, असत्य से सत्य की ओर, सोचने-चलने में प्रेरणा बनती हैं। आपका इसमें क्या मंतव्य है?'

'मैंने आपसे पहले भी कहा था...।' मुनि के प्रश्न के उत्तर में वे बोले- 'शास्त्र सत्य के संकेत बन सकते हैं। किन्तु लगभग भूल यह होती है कि उन संकेतों को ही पूर्ण सत्य मान लिया जाता है। दूसरे, उन संकेतों की व्याख्याएं वे करते हैं, जिनका साक्षात अनुभव से दूर-दूर तक सम्बन्ध नहीं होता। इस तरह वे संकेत मंजिल तक पहुँचाने वाले कम और भटकाने वाले ज्यादा हो जाते हैं।'

चर्चा में कब इतना समय निकल गया, पता नहीं चला। समय देखा तो पौना दो घंटा बीत चुका था। दोनों ओर समय-सीमाएं थीं। इसलिए वार्त्ता को विराम देना पड़ा। मुनि जी यात्रा संघ के साथ बम्बई से

मद्रास की ओर रवाना हो गए। श्री कृष्णमूर्ति भी अपने अगले तय कार्यक्रम के लिए चले गए। संतों का काफिला कन्याकुमारी पहुँचने वाला था, किन्तु मुनि जी मानस-यात्रा में मुम्बई में श्री कृष्णमूर्ति जी से भेंट के बाद अचानक वेल्लूर के एक गाँव में पहुँच गए। इस गाँव में उन्हें जीवन का अनूठा अनुभव हुआ, जिसे स्मरण करके वे यदा-कदा सोच में पड़ जाते। बात जून के अंतिम सप्ताह की है। आचार्यश्री के साथ साधु-साध्वियां तमिलनाडु के उत्तरी जिला क्षेत्र वेल्लूर पहुँचे। बाइस जून को वेल्लूर के पास पुटवाकु नामक गाँव पहुँचे। गर्मी बहुत थी। सूरज पूरे जोश के साथ तमतमा रहा था। दिन बड़ी बेचैनी में कटा। सायं काल पाँच बजे के आसपास मुनि जी और कुछ अन्य साधु एक पहाड़ी पर निवृत्त होने गए। पहाड़ी इलाके का सौंदर्य मुनि जी के मन को लुभा रहा था। मुनि जी निवृत्त होने के पश्चात पगडंडी से नीचे की ओर चल दिए। पश्चिम दिशा में अस्तांचलगामी सूर्य मुनि जी साथ-साथ चलने लगे। पहाड़ी के पीछे सूर्यास्त का दृश्य अद्भुत था। मुनि जी के चरण पगडंडी पर अज्ञात लक्ष्य की ओर बढ़ते जा रहे थे। वे बाकी साधुओं से बिछुड़ गये थे। कुछ देर बाद मुनि जी ने स्वयं को एक अनार्य बस्ती में पाया। वहां के लोग जैन साधुओं के बाने आदि से परिचित नहीं थे। मुनि जी तमाम खूंखार नजरों के घेरे में थे। अब उन्हें अहसास हो गया कि वे अकेले पड़ गए और अनजाने लोगों के बीच में हैं। चंद मिनटों में दाढ़ी वाले, चेक की लुंगी पहने कुछ युवकों ने मुनि जी को घेर लिया। अपनी भाषा में वे गालियां जैसी देने लगे। भाषा भले ही समझ न आए, लेकिन हाव-भाव से पता चल ही जाता है कि सामने वाला प्यार भरी बोली बोल रहा है या अपना आक्रोश व्यक्त कर रहा है। अजीब-सा दृश्य था। मुनि जी चलते जा रहे थे। उनके आगे-पीछे युवकों का झुंड उन्हें लगातार तंग कर रहा था। कहें कि खदेड़ने की मुद्रा में था। उनके तंग करने पर भी जब मुनि जी विचलित नहीं हुए, स्थिर कदमों से आगे बढ़ते रहे, तो उन्होंने छोटे-छोटे कंकड़ बरसाने शुरू किए। मुनि जी कंकड़ों से अपने को बचाते चल रहे थे। उनकी देहयष्टि पर नन्हे-नन्हे कंकड़ ज्यादा असर तो नहीं कर रहे थे लेकिन अगर कोई आँख में चला जाए तो...। अपनी हथेलियों को कंकड़ों के विरुद्ध ढाल बनाते हुए वे कभी इधर घूमते, कभी उधर। मुनि जी जितना अपने को बचाने की कोशिश में दायें-बायें, आगे-पीछे घूमते, युवकों को उतना ही आनंद आता। मुनि जी तो उनके लिए जैसे जीवंत मनोरंजन का साधन बन गए थे। कंकड़ों को बेअसर होते देख उन्होंने पत्थर

मारने शुरू किए। बचाते-बचाते भी एक पत्थर मुनि के माथे पर दायीं ओर घाव कर गया। मुनि जी ने दायीं हथेली घाव पर रखी। खून था कि रुकने का नाम नहीं ले रहा था। उनके दुग्ध-धवल श्वेत वस्त्र रक्तिम हो चले थे। पत्थरों की बरसात अभी रुकी नहीं थी। मुनि जी अब भी चल रहे थे। उन के कदम और तेज हो गये। लेकिन किस लक्ष्य की ओर, नहीं मालूम। पहाड़ी से उतर कर वे एक बस्ती में आ गए थे। खून से नहाए युवा मुनि को देख बस्ती के लोगों में तनिक भी हलचल नहीं हुई। कैसी विचित्र बात है, किसी अज्ञात व्यक्ति को दूसरे लोग कैसे अपना शत्रु मान उस पर हमला करने लगते हैं। अहिंसा का पुजारी हिंसा का शिकार बना हुआ था। सृष्टि का यही नियम है क्या? मुनि जी को महात्मा गांधी का स्मरण हो आया। अहिंसा के मसीहा को कैसे हिंसा की बलि चढ़ना-पड़ा था। मुनि जी सोचते हुए तेज चल रहे थे कि उन युवकों की तरह ही पांच-छह खूंखार कुत्तों ने पीछे से भौंकना शुरू किया। मुनि जी के कदमों की रफतार तेज हो गई। कुत्ते बेतरह भौंकते हुए मुनि जी के पीछे थे। युवकों ने सोचा कि उनका काम कुत्ते ही कर देंगे। माथे से बहते खून से लथपथ मुनि जी के श्वेत वस्त्र अब तक धूल में सन चुके थे। भागते-भागते हाँफने लगे। तभी एक पत्थर से ठोकर लगी और वहीं गिर पड़े। अब कुत्ते नोंच डालेंगे। यह सोच कर उठने की कोशिश में थे कि कुत्ते एकदम करीब आ गए। लेकिन यह क्या, मुनि जी के करीब आकर दो कुत्तों ने उन्हें सूँघा और फिर सामने खड़े होकर पूँछ हिलाने लगे। उन सरदार कुत्तों की देखादेखी बाकी सब भी शांत हो गए। मुनि जी ने संभलते हुए भूरे कुत्ते के सिर को सहलाया। इंसान नहीं पहचान पाया, किन्तु खूंखार माने-जाने वाले कुत्तों ने मुनि जी का अन्तर्मन सूँघ लिया था। सच ही कहा गया, इंसान से ज्यादा खूंखार जानवर कोई और नहीं हो सकता। प्राचीन ग्रंथों में प्रसंग मिलता है कि भगवान महावीर को भी साधना-काल में एक बार ऐसी ही स्थितियों का सामना करना पड़ा था।

x x x (क्रमशः)

जिस क्षण मैंने यह जान लिया कि भगवान हर एक मानव शरीर रूपी मंदिर में विराजमान हैं, जिस क्षण मैं हर व्यक्ति के सामने श्रद्धा से खड़ा हो गया और उसके भीतर भगवान को देखने लगा, उसी क्षण मैं बन्धनों से मुक्त हूँ, हर वो चीज जो बांधती है नष्ट हो गयी, और मैं स्वतंत्र हूँ।

-स्वामी विवेकानंद

केवल तुम नहीं हो!
शोधपरक समीक्षा

○ संपतराय चौधरी

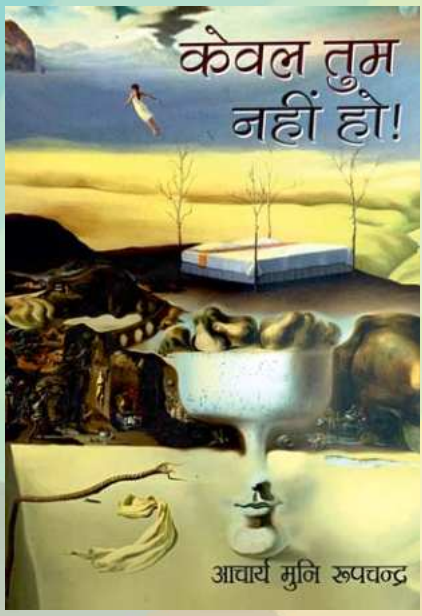

आचार्यश्री रूपचन्द्र जी, विरचित कविताएं, गजलें, मुक्तक आदि थोड़े में बहुत कुछ कहते हैं एवं जिनके कई गूढ़ार्थ निकलते हैं। आचार्यश्री रूपचन्द्रजी एक सन्त कवि हैं। जिस तरह संत कबीर अपने समय में प्रचलित धार्मिक रूढ़ियों और कर्मकांड़ों के घोर विरोधी होने के साथ-साथ अपनी बेलाग बात कहने में नहीं चूकते थे, वैसे ही आचार्य रूपचन्द्रजी धर्म के नाम पर हो रहे आडम्बरों और अन्ध विश्वासों पर अपने साधे शब्दों से तीखा प्रहार करने से नहीं चूकते हैं। विद्रोही स्वर ओर फक्ड़पन में अपनी कविताओं में मर्म को छू लेने वाली बातें कहकर जीवन को सम्यक् तरह से जीने की प्रेरणा देते हैं।

आचार्यवर के अतीत के बारे में उनकी जीवनी 'हंस अकेला' से काफी-कुछ जाना और समझा है। वे मूलतः भगवान् महावीर की परम्परा में दीक्षित संत हैं। वे जैनागमों एवं अन्य दर्शन ग्रन्थों के गहन अध्येता हैं। वे अनासक्त ओर अपरिग्रही जीवन जीने वाले साधनारत संत हैं। स्व-परहित की साधना करते हुए उन्होंने करीब पचास हजार किलोमीटर पैदल यात्राएं की हैं। इन पद-यात्राओं में वे अनेकानेक विशिष्ट एवं सामान्य व्यक्तियों से मिले और उनके साथ विचार-विमर्श किया। इससे उन्हें जैन धर्म में प्रचलित प्रायः सभी सम्प्रदायों और पंथों की साधना पद्धतियों को एवं उनकी मान्यताओं को प्रत्यक्ष जानने और समझने का अवसर मिला। सम्प्रदाय और पंथ से परे होकर इस प्रज्ञा-सम्पन्न साधक ने प्रचलित धार्मिक क्रियाकांड़ों का भगवान् महावीर की मूलवाणी के परिपेक्ष्य में

आकलन किया। उनमें कई तरह की विसंगतियां मिलीं। उन्होंने अनुभव किया किया कि महावीर के नाम पर की जाने वाली साधनाएं निष्प्राण हो रही हैं और कई जगह तो केवल कर्मकांड बन कर रह गई हैं। इसी को देखकर उनका कवि हृदय वेदना से पुकार उठा जो उनकी कविता 'केवल तुम नहीं हो!' में प्रतिध्वनित हुआ।

जब तक कवि का हृदय दया, करुणा व अहिंसा की भावना से ओतप्रोत न हो, तब तक वह एक कल्याणकारी काव्य की रचना में प्रवृत्त नहीं हो सकता। नारद से राम का वृत्त सुनकर भी वाल्मीकि मुनि के अन्तरंग से काव्य की धारा तो तभी प्रवाहित हो सकी, जब इन्होंने एक निषाद को एक क्रौंच पक्षी को मारते देखा ओर उनका हृदय करुणा से रो उठा। अपने ही धर्म की वर्तमान स्थिति देखकर आचार्यप्रवर का कवि हृदय रो पड़ा और तीखे शब्दों से ही सही, उन्होंने नसीहत भी दे दी। जैनगमों में एक प्रसिद्ध इतिहास ग्रन्थ आदिपुराण में उसके रचयिता आचार्य जिनसेन कहते हैं-

परेषां दूषणाज्जातु न बिमेति कबीश्वरः।
किमुलूकभयाद् भुन्वन् ध्वान्तं नोदेति भानुमान्।।

अर्थात् उत्तम कविजन दूसरों के द्वारा निकाले हुए दोषों से कभी नहीं डरते। क्या अन्धकार को नष्ट करने वाला सूर्य उलूक के भय से उदित नहीं होता? इस कविता में भी कवि ने अपनी वेदना भयमुक्त होकर प्रकट की। यह अन्य मतावलम्बियों की नहीं, अपितु अपने ही धर्म के मतावलम्बियों के बारे में। एक दृष्टि से तो यह स्व-निन्दा है, पर-निन्दा नहीं। स्व-निन्दा से हृदय की कलुषता मिटती है। महावीर का नाम लेकर महावीर के अनुयायी उन्हीं के सिद्धान्तों का कैसा उपहास कर रहे हैं, यही कवि की वेदना है।

कवि ने अपनी पदयात्रा में भगवान् महावीर की उस साधना भूमि में देखा-

''वह स्थान-
जहां तुमने पहला श्वास लिया,
वह स्थान-
जहां तुमने अन्तिम निःश्वास लिया,
वे जंगल-दर-जंगल-
जहां तुम घूमे थे अपनी ही खोज में,
वे घाटियां-गुफाएं-
जहां तुमने आंखें मूंदे हुए,
सूर्याभिमुख, नासाग्र दृष्टि टिकाए,
बिताए थे बारह वर्ष अपनी ही मौज में,
खण्डहरों में बोलता हुआ खण्ड-खण्ड इतिहास,
यह सब कुछ तो हमारे पास,
पर तुम कहां हो?''

प्रव्रज्या ग्रहण करने के बाद महावीर की एकाकी साधना थी- अपनी खोज अर्थात्

आत्मा की खोज। महावीर वाणी का प्रथम आगम है- आचारांग सूत्र। इस आगम का प्रारम्भ ही इसी प्रश्न से होता है- ''के अहं आसी?''[2] अर्थात् मैं कौन हूं? आचारांग का यह पद आत्म सम्बन्धी जिज्ञासा का जागृति का सूचक है। इसी का समाधान देते हुए आगे कहा है- 'सोहं'[3] अर्थात् कर्मानुसार भ्रमण करता हुआ वह मैं हूं यानी आत्मा हूं। यह आत्मवादी आस्था की स्थिति है। जो आत्मवादी होगा वह कर्म को भी मानेगा, कर्मबन्ध के कारणों को भी मानेगा। फिर उन कारणों को जानकर उनमें से जो छोड़ने योग्य है उन्हें छोड़गा। आत्मबोध होने पर महावीर ने कहा- 'ते आत्तओ पासइ सव्वलोए'[4] अर्थात्- सब प्राणियों को अपनी आत्मा के समान देखो क्योंकि स्वरूप दृष्टि से सभी आत्माएं समान हैं। 'सव्वे पाणा पिआउआ, सुहसाया दुक्खपडिकूला, नाइवाएज्ज कंचणं'[5] अर्थात्- सब प्राणियों को अपनी जिन्दगी प्यारी है, सुख सबको अच्छा लगता है और दुःख बुरा, अतः किसी भी प्राणी की हिंसा न करो। इसी आत्मबोध से महावीर की अहिंसा का जन्म होता है। इसलिए महावीर कहते हैं- 'तुमंसि नाम तं चेव जं हन्तव्वं ति मन्नसि'[6] अर्थात्- तू जिसे मारना चाहता है, वह तू ही है। जो अन्य की हिंसा करता है, वह वस्तुतः अपनी हिंसा करता है, अतः हिंसावृत्ति आत्म-हिंसा है। यही उनकी अपनी खोज अर्थात् आत्मा की खोज थी। इसी को खोजने के लिए उन्होंने एकाकी ध्यान में रहकर तप करते हुए बारह वर्ष बिताये और कैवल्य प्राप्त किया। इस पर कवि कहते हैं-

''वे शब्द-
जो तुमने खोले थे
भीतर की गहराईयों में डूबकर
वे दरवाजे-
जो तुमने खोले थे
इस मरणधर्मा देह से ऊबकर''

जो ज्ञान, ध्यान के द्वारा महावीर ने प्राप्त किया भीतर की गहराईयों से वह निज के अनुभव पर आधारित था। उन्होंने उस ज्ञान का अनावरण इस मरणधर्मा यानी नाश्वान देह से ऊपर उठकर प्राप्त किया। यह उनका आत्मधर्म था।

महावीर की आत्म-खोज का निष्कर्ष था- 'अन्ने खलु कामभोगा, अन्नो अहमंसि'[7] शब्द, रूप आदि कामभोग जड़ पदार्थ हैं, मैं (आत्मा) और हूं। राग-द्वेष, कर्म, शरीर आदि संयोगजन्म बाह्यभाव है, वे आत्मा के नहीं है। इन बाह्य भावों से मुक्त होना ही आत्मा को पाना है। कवि ने महावीर के इस आत्मधर्म को पहचाना। परन्तु इसी आत्मधर्म का नाम लेकर वर्तमान में जो कर्मकांड हो रहे हैं, उसे देखकर कवि की वेदना प्रकट हुई-

''कागज की पीठ पर
क्षत-विक्षत अक्षर,
तुम्हारे बिम्ब को उजागर करने वाले पत्थर,
मन को ठगने वाली पूजाएं,
परत-दर-परत वासनाओं को मन में दबाए
हुए उपासनाएं,
लाशों का भार ढोती हुई परम्पराएं
श्रोपी हुई निष्प्राण परिभाषाएं...
खूंटे पर बंधे बछड़े-सा निश्वास
सब कुछ तो है हमारे पास
पर तुम कहां हो?''

कवि पुकार उठता है कि हे महावीर! तुम्हारी उपासना करने के लिए तुम्हारे अनुयायियों ने तुम्हारी मूर्तियां में गढ़ली ओर उनकी पूजाएं करनी शुरू कर दी, परन्तु उन पूजाओं ओर उपासनाओं में वासनाओं ओर इच्छाओं का बोलवाला हो गया। तेरे अनुयायियों ने तेरे शाश्वत शब्द 'छंद निरोहेण मोक्खं'[8] इच्छाओं के निरोध से ही मोक्ष होता है, को भूला दिया। जो महामंत्र नवकार इच्छाओं को निरोध कर वीतराग भाव को प्राप्त करने का साधन है, उसका ही जाप करके उसे इच्छा प्राप्ति का साधन मान लिया। कैसी विडम्बना है? तुमने कहा- जो झायइ अप्पाणं, परमसमाही हवे तस्स'[9] जो आपनी आत्मा का ध्यान करता है, उसे परम समाधि की प्राप्ति होती है, लेकिन हमने तो तेरी पूजा में ही परम समाधि की इतिश्री मान ली। तुमने तो आत्मधर्म का बोध दिया, किसी संप्रदाय या पंथ का सूत्रपात नहीं किया, परन्तु हमने तो तेरे ही नाम पर अनेक संप्रदायें और पंथ खड़े कर दिये। कोई दिगम्बर हो गया, कोई श्वेताम्बर, कोई मूर्तिपूजक, कोई स्थानकवासी, कोई तेरापंथी तो कोई बीसपंथी हो गया। कवि की वेदना है कि इन सब में आत्मधर्म कहां रह गया जो पंथ और सम्प्रदाय से परे है! सभी अपनी-अपनी तरह से तेरे धर्म की व्याख्या करके अपने को दूसरों से श्रेष्ठ बताते हैं और अपनी मान्यता को ही महावीर वाणी का नाम देते हैं। तुम्हारे दिये हुए अनेकान्त दर्शन को उन्होंने एक अन्धेरे कोने में रख दिया ताकि उसे कोई देख न सके। पंथों और सम्प्रदायों ने अपनी-अपनी मान्यताओं से अपने अनुयायियों को अपने खूंटे से बांध दिया। वे सत्य का गला घोंट रहे हैं। तेरा तो स्पष्ट कथन था- 'सयं सयं पसंसतां, गरहंता परं वयं, जे ड तत्थ विउस्सन्ति, संसार ते विउस्सिया'[10] जो अपने मत की प्रशंसा और दूसरे मत की निन्दा करने में ही अपना पांडित्य दिखाते हैं, वे एकान्तवादी संसार चक्र में भटकते ही रहते हैं। आत्मधर्म की दृष्टि से हमारी पूजाएं और उपासनाएं केवल रूढ़ियां बन कर रह गईं। तुम्हारी देशना के प्राण से वे रहित दिख रही हैं। तेरे

नाम पर चलने वाली परम्पराएं मोक्षमार्ग में केवल भार रूप रह गईं हैं। इसलिए कवि की वेदना के आंसू छलकते हुए कह रहे हैं-

''बहुत-बहुत इकट्ठा किया है हमने
तुम्हें पाने के लिए
ओ निर्ग्रन्थ!
ग्रन्थियों से भरे,
स्याही का मार पीठ पर लादे हुए
रच दिये हैं अनगिनत शास्त्र, ग्रन्थ
आकंठ डूबे हैं परिग्रह-संग्रह में
तुम्हें ठीक से समझने के लिए
ओ दिगम्बर!
स्थान-स्थान पर खड़े हैं
तुम्हारे अकिंचनत्व मजाक करने वाले
वैभवशाली गगनचुम्बी स्थानक, मंदिर,
ओ धर्मतीर्थ का प्रवर्तन करने वाले तीर्थंकर!
ये कैसा उपहास!
सब कुछ तो है हमारे पास
केवल तुम नहीं हो! केवल तुम नहीं हो!''

कवि कहता है- हे निर्ग्रन्थ! तुमने तो ग्रन्थियों रहित अपरिग्रह का सिद्धान्त दिया महावीरत्व को पाने के लिए, लेकिन तुम्हें पाने के लिए हमने तो परिग्रह के पहाड़ खड़े कर दिये। अपने-अपने मत को तेरा ही मत बताने के लिए अनेकों शास्त्रों की रचनाएं कर दी, वैभवशाली गगनचुम्बी मंदिर ओर स्थानक बना दिये! तुम तो आन्तरिक और बाह्य ग्रन्थियों से रहित, पूर्ण अकिंचन अपरिग्रही थे। लेकिन तुम्हारी वीतरागता पाने के लिए हम अपरिमित परिग्रह का सहारा ले रहे हैं, कैसा उपहास है उस तीर्थंकर के प्रति जिसने संसार सागर पार करने के लिए स्वयं की खोज की और आत्मधर्म का प्रवर्तन किया? हम तो भूल बैठे तेरे इस सूत्र को-

वदणियमाणि धरंता, सीलाणि तहा तवं च कुव्वंता।
परमट्ठ बाहिरा जे, णिव्वाणं तेण विंदन्ति।।[12]

भले ही व्रत नियम धारण करे, तप और शील का आचरण करे, किन्तु जो परमार्थरूप आत्मबोध से शून्य है, वह कभी निर्वाण प्राप्त नहीं कर सकता। महावीर की बातें प्रवचनों में सुनी जाती हैं लेकिन वह आचरण में नहीं दिख रही हैं। साधना में भी आत्मबोध की झलक कहां है? महावीर ने निष्कर्ष रूप में एक जीवन बोध दिया- 'सव्यं अप्पे जिए जियं'[12] जो अपने विकारों को जीत लेता है वह सबको जीत लेता है। विकारों को जीतने पर ही वीतराग भाव की प्राप्ति होती है। इसके अभाव में सब पूजा-पाठ, जप, निय, व्रत आदि शून्य बिन्दु की तरह हैं। उनमें जब तक महावीरत्व का अंक आगे नहीं लगेगा, उनका कोई मूल्य नहीं है। कवि की अपेक्षा है कि हमारे जीवन में और साधना में महावीरत्व झलके, तभी हम अपने को प्राप्त कर सकते हैं।

विश्व वसन्त में सरस्वती

○ अरुण पांडे

माघ शुक्ल पक्ष पंचमी को श्री पंचमी के नाम से जाना जाता है। श्री का अर्थ लक्ष्मी, कात्यायनी और सरस्वती है। श्री पंचमी के दिन वसंत का जन्म होता है और सरस्वती की पूजा होती है। दोनों जयन्तियां पूरी दुनिया में मनाई जाती है। यूनान का म्यूज पूजा सरस्वती पूजा थी।

वसंत ऋतुराज कहलाता है ओर वह श्रीकृष्ण का विराट रूप है। महाभारत काल में उन्होंने गाण्डीवधारी अर्जुन से बताया था ''मैं ऋतुओं में वसंत हूं।'' बालक वसन्त के स्वागत में प्रकृति शृंगार करती है। वृक्ष की डाली को वह पलना बनाती है। उस पलने में वृक्षों के नये-नये पत्ते बिछा दिये जाते हैं। बालक वसंत को फूलों से बना झिगोला पहना दिया जाता है। उन्हें जादू-टोना न लगने पाए इसलिए कमल की कलियां उनके सिर पर राई और नमक का टीका लगा देती है। लताएं बुरी नजर से बचाने के लिए बालक वसंत को लता से ढक देती है। कोयल गाती है और मयूर नाचते हैं। सुग्गे उनका मन बहलाते हैं। हवा के झोंके पलना झुलात हैं और वसंत किलकारियां मारते हैं।

युवा होने पर वसंत का विवाह मधुश्री और माधव श्री के संग होता है। इसी वसन्त की परी को यूनान में रीया और रोम में सिब्बले कहा जाता है। माधव श्री इटली में फेमिना बोली जाती है। उनकी पूजा लड़किया उद्यानों में करती हैं। सौन्दर्य की रानी वीनस यूनान के जंगल के फूलों से सजे पलने पर हिण्डोले का आनन्द लेती है। फ्लोरा देवी के चूमने से सारे फूल खिल उठते हैं और तितलियां उन

रंग-बिरगें फूलों पर झूमने लगती है। इस प्रकार सारी दुनिया में वसंत का अभिनन्दन होता है। कवि टामस ने वसंत को वर्ष का राजा कहा है।

वसंत के इसी रंग पर्व पर कला और संगीत की देवी सरस्वती की पूजा होती है। इन्हें वाग्देवी यानी विद्या की देवी कहा जाता है। श्री पंचमी के दिन सरस्वती पूजा के साथ-साथ पश्चिम बंगाल और बांग्लादेश में लड़कियां पीले वस्त्र पहनकर केसरिया रंग के साथ पिचकारी से होली खेलती हैं। सरस्वती के हाथों में वीणा और पुस्तक होती है तो संगीत और ज्ञान का प्रतीक माना जाता है।

इस देश को ऋषभ के बेटे भरत के नाम से भारत वर्ष कहा जाता है भरत की दोनों राज कुमारियां ब्राह्मी और सुन्दरी सरस्वती की बेटियां थीं। ब्राह्मीने जिस लिपि ओर लेखन रूप का अविष्कार किया था। उसे आज ब्राह्मी लिपि कही जाती है। सुन्दरी ने चित्रकला, अल्पना और रंजन कला का प्रचार किया था जो आज प्राविधिक कला कहलाती है।

यूनान में संगीत की देवी म्यूज की पूजा होती थी। उस देश में कविता, कहानी, कला, इतिहास, भूगोल आदि की चौदह सरस्वती होती थीं। कवि होमर ने म्यूज की वन्दना की थी। वाल्मीकि, व्यास, याज्ञवल्क्य, उतथ्य आदि ने सरस्वती के वरदान से कवि और ज्ञानी हुए थे। चीन में नील सरस्वती की पूजा होती थी। सामदेव में सरस्वती के वरदान से कवि और ज्ञानी हुए थे। सामदेव में सरस्वती की सात बहने बतायी गई हैं। दक्षिण की विजयांका भी सरस्वती थी, कालिदस की विद्योत्तमा साक्षात् सरस्वती थीं।

एथेंस की सरस्वती मिनर्वा कला और बुद्धि की देवी थी। साम्राट फिसियाड ने उनका मंदिर बनवाया था। जहां मिनर्वा अन्तर्ध्यान हुई थी वहां जैतून वृक्ष उग आया था। यूरोत की लड़कियां जैतून के पत्ते का मुकुट पहन कर मिनर्वा का स्वागत करती है। मिनर्वा भाषण के साथ-साथ सामान्य ज्ञान, विज्ञान और प्रतियोगिता की सरस्वती है। चेरी विज्ञान की सरस्वती थी।

जब खेतों में सरसों खिलती है तब उसकी वासन्ती रंग में देख के जवान और किसान झूम उठते हैं। कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान के कंठ से फूट पड़ता है। फूली सरसों ने दिया रंग, वीरों का कैसा हो वसंत। वसन्त उल्लास, उमंग, आशा और शौर्य जगाता है ताकि हम आतंकवाद से देश की रक्षा कर सकें। सरस्वती विद्या की देवी है जो हमें विज्ञान और कविता शक्ति की प्रेरणा देती है।

जब सत्यभामा को हुआ रूप का घमंड

श्रीकृष्ण भगवान द्वारका में रानी सत्यभामा के साथ सिंहासन पर विराजमान थे। निकट ही गरूड़ और सुदर्शन चक्र भी बैठे हुए थे। तीनों के चेहरे पर दिव्य तेज झलक रहा था। बातों ही बातों में रानी सत्यभामा ने श्रीकृष्ण से पूछा कि हे प्रभु! आपने त्रेतायुग में राम के रूप में अवतार लिया था, सीता आपकी पत्नी थीं। क्या वे मुझसे भी ज्यादा सुंदर थीं?

द्वारकाधीश समझ गए कि सत्यभामा को अपने रूप का अभिमान हो गया है। तभी गरूड़ ने कहा कि भगवान क्या दुनिया में मुझसे भी ज्यादा तेज गति से कोई उड़ सकता है? इधर सुदर्शन चक्र से भी रहा नहीं गया और वे भी कह उठे कि भगवान! मैंने बड़े-बड़े युद्धों में आपको विजयश्री दिलवाई है, क्या संसार में मुझसे भी शक्तिशाली कोई है?

भगवान मन ही मन मुस्कुरा रहे थे। वे जान रहे थे कि उनके इन तीनों भक्तों को अहंकार हो गया है और इनका अहंकार नष्ट करने का समय आ गया है। ऐसा सोचकर उन्होंने गरूड़ से कहा कि हे गरूड़! तुम हनुमान के पास जाओ और कहना कि भगवान राम, माता सीता के साथ उनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। गरूड़ भगवान की आज्ञा लेकर हनुमान को लाने चले गए।

इधर श्रीकृष्ण ने सत्यभामा से कहा कि देवी! आप सीता के रूप में तैयार हो जाएं और स्वयं द्वारकाधीश ने राम का रूप धारण कर लिया। मधुसूदन ने सुदर्शन चक्र को आज्ञा देते हुए कहा कि तुम महल के

प्रवेश द्वार पर पहरा दो और ध्यान रहे कि मेरी आज्ञा के बिना महल में कोई प्रवेश न करे।

भगवान की आज्ञा पाकर चक्र महल के प्रवेश द्वार पर तैनात हो गए। गरूड़ ने हनुमान के पास पहुंचकर कहा कि हे वानरश्रेष्ठ! भगवान राम, माता सीता के साथ द्वारका में आपसे मिलने के लिए प्रतीक्षा कर रहे हैं। आप मेरे साथ चलें। मैं आपको अपनी पीठ पर बैठाकर शीघ्र ही वहां ले जाऊंगा।

हनुमान ने विनयपूर्वक गरूड़ से कहा, आप चलिए, मैं आता हूं। गरूड़ ने सोचा, पता नहीं यह बूढ़ा वानर कब पहुंचेगा? खैर मैं भगवान के पास चलता हूं। यह सोचकर गरूड़ शीघ्रता से द्वारका की ओर उड़े। पर यह क्या? महल में पहुंचकर गरूड़ देखते हैं कि हनुमान तो उनसे पहले ही महल में प्रभु के सामने बैठे हैं। गरूड़ का सिर लज्जा से झुक गया।

तभी श्रीराम ने हनुमान से कहा कि पवनपुत्र! तुम बिना आज्ञा के महल में कैसे प्रवेश कर गए? क्या तुम्हें किसी ने प्रवेश द्वार पर रोका नहीं?

हनुमान ने हाथ जोड़ते हुए सिर झुकाकर अपने मुंह से सुदर्शन चक्र को निकालकर प्रभु के सामने रख दिया।

हनुमान ने कहा कि प्रभु! आपसे मिलने से मुझे इस चक्र ने रोका था इसलिए इसे मुंह में रख मैं आपसे मिलने आ गया। मुझे क्षमा करें। भगवान मन ही मन मुस्कुराने लगे।

हनुमान ने हाथ जोड़ते हुए श्रीराम से प्रश्न किया- हे प्रभु! आज आपने माता सीता के स्थान पर किस दासी को इतना सम्मान दे दिया कि वह आपके साथ सिंहासन पर विराजमान है?

अब रानी सत्यभामा का अहंकार भंग होने की बारी थी। उन्हें सुंदरता का अहंकार था, जो पलभर में चूर हो गया था। रानी सत्यभामा, सुदर्शन चक्र व गरूड़जी तीनों का गर्व चूर-चूर हो गया था। वे भगवान की लीला समझ रहे थे। तीनों की आंखों से आंसू बहने लगे और वे भगवान के चरणों में झुक गए।

अद्‌भुत लीला है प्रभु की! अपने भक्तों के अंहकार को अपने भक्त द्वारा ही दूर किया उन्होंने।

सार जीवन में कभी भी अहंकार नहीं करना चाहिए। जरूरी नहीं है कि आज जो आपके पास है, वह कल भी होगा। अपने अंदर जरा-सा भी अगर अहंकार आने लगे तो स्वयं ठाकुरजी हमसे दूर हो जाते हैं। ठाकुरजी को निरूस्वार्थ भक्तों की ही जरूरत है, अहंकारी की नहीं।

-संकलित

कर्ण की निष्ठा

एक राज पुत्र होते हुए भी कर्ण सूत पुत्र कहा गया। कर्ण एक महान दानवीर था। अपने प्रण और वचन के लिए कर्ण अपने प्राणों की भी बलि दे सकता था। पांडवों की शिक्षा खतम होने के बाद आयोजित रंग-भूमि में आकर कर्ण अर्जुन को ललकारता है कि अगर वह संसार का सर्वश्रेष्ठ धनुरधर है तो उससे मुकाबला कर के सिद्ध करे।

कर्ण एक सूत के घर पला-बढ़ा होता है, इसलिए उसे सूत पुत्र समझ कर अर्जुन से मुकाबला नहीं करने दिया जाता है। पांडवों के प्रखर विरोधी दुर्योधन को यहाँ एक अवसर दिखता है, और वह फौरन कर्ण को अंग देश का राजा घोषित कर देता है। और कर्ण को अपना मित्र बना लेता है।

दुर्योधन के इस से कर्ण के दुखते घावों पर मरहम लग जाता है। लेकिन समय सीमा खत्म होने के कारण रंगभूमि में कर्ण-अर्जुन का मुकाबला टल जाता है।

पांडवों और कौरवों के अंतिम निर्णायक युद्ध के पहले भगवान कृष्ण कर्ण को यह भेद बताते हैं कि तुम एक पांडव हो और कुंती के ज्येष्ठ पुत्र हो। इस रहस्य को जान कर भी कर्ण अपनें मित्र दुर्योधन से घात कर के अपने भाइयों की ओर नहीं जाता है।

कुंडल के साथ कर्ण अजेय था और महाभारत के युद्ध में पांडव कभी उसे परास्त नहीं कर पाते। अतः इन्द्रदेव उससे सुबह स्नान के समय ब्राह्मण स्वरूप में आ कर दान में कवच-कुंडल मांगते हैं। पिता सूर्य देव द्वारा दिखाए गए स्वप्न से कर्ण को यह बात पहले ही ज्ञात हो जाती है कि इंद्र देव उससे रूप बदल कर कवच-कुंडल मांगने आयेंगे।

पर फिर भी दानवीर कर्ण ब्राह्मण रुपी इंद्र देव को खाली हाथ नहीं लौटता और उनकी मांग पूरी करता है। इंद्र देव कवच-कुंडल के बदले में कर्ण को एक शक्ति अस्त्र प्रदान करते हैं, जिसका इस्तेमाल सिर्फ एक बार किया जा सकता था और उसका कोई काट नहीं था।

युद्ध के दौरान भीम का पुत्र घटोत्कच कौरव सेना को तिनकों की तरह उड़ाए जा

रहा था। उसने दुर्योधन को भी लहूलहान कर दिया। तब दुर्योधन सहायता मांगने कर्ण के पास आया। कर्ण शक्ति अस्त्र सिर्फ अर्जुन पर इस्तेमाल करना चाहता था, पर मित्रता से विवश हो कर उसने वह अस्त्र भीम पुत्र घटोत्कच कर चला दिया। और उसका अंत कर दिया। और इस तरह अर्जुन सुरक्षित हो गया।

अपनें साथ दो-दो शापों का बोझ ले कर चल रहे कर्ण को यह बात पता थी की जहां धर्म है वहीं कृष्ण होते हैं और जहां कृष्ण है वहीं विजय भी होती है। फिर भी उसने न दुर्योधन के एहसान भूल कर उससे घात किया, और ना ही अपनी दानवीरता से कभी पीछे हटा।

सार- हो सके तो किसी के ऋणी मत बनो, और एक बार अगर किसी के ऋणी बन ही जाओ तो ऋण चुकाने में आनाकानी मत करो। अगर कोई कुछ मांगने आए तो उसे निराश नहीं करना चाहिए, जितना संभवतः हो उसकी मदद करनी चाहिए।

-प्रस्तुति : साध्वी वसुमति

दोहा

माँ सरस्वती

कमलवासिनी, शारदे, सादर तुझे प्रणाम।
दी हाथों में लेखनी, पूरण करना काम।।

सरस्वती माँ दीजिए, मुझको ये वरदान।
कमल सदा करती रहे, तेरा ही गुणागान।।

माँ जगवंदन भारती, दो ऐसी सौगात।
जन गण मन के हित लिखे, कमल सदा दिनरात।।

मातु शारदे, भारती, दो छंदों का ज्ञान।
लिखे निरंतर लेखनी, बढ़े देश का मान।।

वीणा पुस्तकधारिनी, ज्ञान-ज्योति आगार।
तिमिर अविद्या का हरो, भरो मधुर झंकार।।

हंसवासिनी, शारदे, भरो अनोखा प्यार।
ज्ञानदायिनी दो मुझे, भावों का संसार।।

चूना बड़े काम की चीज

चूने के औषधीय गुणों का रोगों में लाभ- अनेक छोटे-छोटे रोगों से छुटकारा पाने के लिए चूने का विभिन्न प्रकार से प्रयोग करें। यह अपने औषधीय गुणों के कारण सहयोग देता है। रोगों को ठीक कर देता है।

खुजली का इलाज- यदि शरीर में खुजली इतनी हो कि आप चैन न ले पाएं तो भी चूना काम आता है। एक बर्तन में तीन भाग गो-मूत्र लें। एक भाग चूना भी डालें। इसमें थोड़ा पिघला हुआ मोम भी डालें, मिलाएं। मरहम तैयार कर लें। इसे खुजली वाले स्थान पर लगाने से चैन मिलेगा।

विषैला भोजन- यदि कोई विषैला भोजन खा लिया हो तो आधा गिलास दूध लें। इसमें एक चौथाई गिलास चूने का पानी डालें और पी जाएं। यदि अधिक असर है तो दूध व चूना पानी की मात्रा बढ़ा दें। विष का प्रभाव उतर जाएगा।

घाव का उपचार- खुजली के लिए यहां बताए मरहम को तैयार कर घाव पर लगाएं। घाव भर जाएगा।

अतिसार का उपचार- चूने का पानी, गर्म दूध तथा गोंद मिलाकर पिचकारी से रोगी के गुदा में डालें। रोग नहीं रहेगा।

प्रदर रोग होने पर- प्रदर रोग महिलाओं का परेशान करने वाला होता है। तीन भाग जल तथा एक भाग चूने का पानी लें। दोनों को मिलाएं। इसे पिचकारी में भरें। इसे गर्भशय में दें। यह गर्भाषय को साफ कर देगा। इससे रोग शांत हो जाएगा।

मकड़ी का जहर- यदि मकड़ी का जहर फैल जाए ओर यह त्वचा पर फुंसियां कर दे तो इसका इलाज भी चूने से संभव है। चूना, तेल तथा चिरौंजी के दाने तीनों को एक साथ पीस लें। इसको उस स्थान पर लगाएं, जहां दाने हुए हैं। आराम मिलेगा।

दस्त लगने पर- अगर किसी को दस्त परेशान कर रहे हों तो तुलसी का रस, शहद और मामूली सा चूना, तीनों को मिलाएं। चाटें। इससे आराम पा लेंगे। जब तक जरूरत हो, दिन में तीन खुराक ले सकते हैं।

मुंहासों का इलाज- यदि चेहरे पर मुंहासे हों तो शहद में मामूली सा चूना मिलाकर लगाएं। आराम मिलेगा। कुछ दिन लगाएं।

बिच्छू के काटने पर- यदि बिच्छू काट जाए तो चूना तथा नौसादर मिलाकर लगाएं तुरंत आराम मिलेगा।

बच्चों के रोगों में- यदि बच्चों को एक-दो चम्मच चूने का पानी रोज पिलाते रहें तो उनका शरीर मजबूत होगा। इतना ही नहीं, उन्हें दस्त, उल्टी, पेटदर्द, बदहजमी जैसे रोग नहीं होंगे।

-अरूण योगी

मासिक राशि भविष्यफल-फरवरी 2019

○ डॉ. एन. पी. मित्तल, पलवल

मेष- मेष राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह शुभ रहेगा। इस माह कोई नई योजना फली भूत हो सकती है, कोई पिछला रूका हुआ धन भी प्राप्त हो सकता है। समाज में यश मान, प्रतिष्ठा बनी रहेगी। परिवारिक जनों का सहयोग रहेगा। किन्हीं सरकारी कर्मचारियों की पदोन्नति भी सम्भव है। सेहत के प्रति सचेत रहना होगा।

वृष- वृष राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह कुछ अड़चनों के बाद शुभ फल देने वाला है। कोई रूका हुआ धन प्राप्त हो सकता है। शत्रु सिर उठाएंगें। आपके आस-पास ऐसी स्थितियां बनेंगी कि आपको क्रोध आयेगा-अपने क्रोध पर काबू रखें, अन्यथा नुकसान उठाना पड़ सकता है।

मिथुन- मिथुन राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह आय कम और व्ययधिक्य देने वाला है। स्वभाव में भी क्रोध का असर रहेगा। मानसिक परेशानी का सामना करना पड़ेगा। इस माह का केवल प्रथम सप्ताह कुछ शुभ प्रदायक है जिसमें कोई शुभ सूचना मिल सकती है। समाज में मान प्रतिष्ठा बनी रहेगी।

कर्क- कर्क राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह लाभालाभ की स्थिति लिये रहेगा। परिवार जनों से विचार भिन्नता के कारण मानसिक उद्विग्नता रहेगी। कानून के भी कुछ झंझट उठ सकते हैं और शत्रु भी परेशान कर सकते हैं जिसका समझौते के रूप में मास के अन्त तक हल निकलने की सम्भावना है।

सिंह- सिंह राशि के जातकों के लिये यह माह व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से कुल मिलाकर अच्छा ही कहा जाएगा। परिवार व कुटुम्बजनों में असामन्जस्य रहेगा किन्तु बाद में मेल जोल का वातावरण बन जाएगा। इस माह का उत्तरार्ध अधिक शुभ फलदायक है। समाज में मान प्रतिष्ठा, व यश की वृद्धि होगी।

कन्या- कन्या राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह पूर्वार्ध से उत्तरार्ध में अच्छा फल देने वाला है। वैसे स्वभाव में क्रोध अधिक रहेगा। शुभ परिणामों के लिये क्रोध पर काबू रखना होगा। परिवार जनों में असामन्जस्य सम्भावित हैं, कोई बीच का रास्ता निकालें। खाने पीने के मामलें में बदपरहेजी स्वास्थ्य हानि कर सकती है।

तुला– तुला राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह अधिक परिश्रम द्वारा लाभ कराने वाला है। काफी दौड़ धूप करनी पड़ेगी। संगी साथी भी काम में मदद देने लगेंगे। समाज में मान सम्मान बना रहेगा। स्वजनों से वैर-विरोध होकर सुलह होने के आसार हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से छोटी मोटी बीमारी होगी जो ठीक हो जाएगी।

वृश्चिक– वृश्चिक राशि के जातकों के लिये यह माह मिला जुला प्रभाव लिये हुए होगा। नये लोगों से सम्पर्क बनेंगे। खर्च की कुछ अधिकता रहेगी। मानसिक चिन्ता रहेगी। इस माह का आखिरी सप्ताह इन जातकों के लिये शुभ कहा जा सकता है। घर में कोई मांगलिक कार्य सम्भावित है। अचानक कहीं से पैसा भी मिल सकता है। इन जातकों को अपनी सेहत के प्रति सचेत रहना होगा।

धनु– धनु राशि के जातकों के लिये यह माह व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से शुभ फलदायक है। माह के आरम्भ से ही व्यापार वृद्धि गोचर होने लगेगी। बड़े लोगों से मेल जोल होगा। परिवार जनों में सामन्जस्य बना रहेगा। समाज में मान प्रतिष्ठा बनी रहेगी। कुछ लोग बहकाने की कोशिश कर सकते है, उनकी बातों में न आएं। इस माह में ये जातक कोई नया कार्य हाथ में न लें। घर में कोई मांगलिक कार्य सम्भावित है।

मकर– मकर राशि के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह आर्थिक दृष्टि से तृतीय सप्ताह में अति शुभफलदायक है जब कि बाकी सप्ताहों में लाभ तो होगा पर कोई न कोई अनावश्यक खर्च भी होगा। परिवार के लोगों में सामन्जस्य बना रहेगा। कुछ कानूनी अड़चनें आयेंगी मगर दूर हो जायेंगी। कुछ जातक राजनीतिक सफलता भी अर्जित कर सकते हैं। वाहन चलाने में सावधानी बरतें।

कुम्भ– कुम्भ राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि ये यह माह कुल मिलाकर अवरोधों के पश्चात अल्प आर्थिक प्राप्ति का है। केवल प्रथम सप्ताह फिर भी संतोषजनक फल दायक है। भूमि भवन के मामलों में सचेष्ट रहना होगा। अपने ही प्रतिकूल व्यवहार करेंगे। मानसिक रूप से चिन्तित रहेंगे।

मीन– मीन राशि के जातकों के लिये व्यापार -व्यवसाय की दृष्टि ये यह माह कुल मिला कर अच्छा फल देने वाला है। परिश्रम तो अधिक करना पड़ेगा किन्तु लाभ मिलेगा। कोई नई योजना भी कार्यान्वित हो सकती है। इस माह का प्रथम सप्ताह शुभ फल दायक नहीं है, अन्य तीनों सप्ताह अच्छे रहेंगे। शत्रु सिर उठायेंगे किन्तु विजय इन जातकों की ही होगी। बुजुर्गों का आशीर्वाद प्राप्त करें। आत्म विश्वास बनाएं रखें।

-इति शुभम्

परंपरा-मोह में हम वीतराग-धर्म को न भूल जाएं

○ आचार्यश्री रूपचन्द्र

हमारा सौभाग्य है कि हमें विरासत में वीतराग-धर्म मिला है। भगवान महावीर की अमृत-देशना को अगर हम एक शब्द में समझना चाहें, वह है वीतरागता। निर्वाण-पथ का राही किसी भी प्रकार के राग-बंधन में नहीं बंधे। वह राग-भाव न अपने शरीर पर हो, न परिवार और धन-परिग्रह पर, न अपने पंथ गुरू आम्नाय और मान्यता/परंपरा पर। देखा यह गया है काम-राग और स्नेह-राग पर विजय पाने वाले भी अपने पंथ/संघ और गुरू-परंपरा के मोह-व्यामोह से मुक्त नहीं हो पाते हैं। इसीलिए महान् हेमचन्द्राचार्य फरमाते हैं-

काम-राग स्नेह-रागौ ईषत् कर निवारणौ
दृष्टि-राग स्तु पापीयान् दुरूच्छेदः सतामपि

अर्थात् आत्म-यात्रा में काम-राग और स्नेह-राग तो थोड़े अभ्यास-साधना द्वारा छूट जाते हैं। किन्तु पंथ/संप्रदाय के प्रति राग-भाव से मुक्ति पाना संत-पुरुषों के लिए भी आसान नहीं होता- ये उद्‌गार जैन आश्रम, ध्यान-मंदिर हाल में **श्री प्राज्ञ जैन मित्र मंडल द्वारा आयोजित** सामायिक-स्वाध्याय संगोष्ठी में पूज्य आचार्यश्री रूपचन्द्रजी ने प्रकट किये।

आपने कहा- सामायिक/स्वाध्याय का प्रयोजन होता है आत्म-रमण। वह अभ्यास मंदिर में भी हो सकता है, भवन/स्थानक में भी। महत्त्वपूर्ण आत्म-रमण है न कि बाहरी वेश-भूषा और क्रिया-विधि-विधानों पर। हम अपने गुरू/आचार्य द्वारा प्रदत्त विधि-विधानों को ही सम्यक् मान लें तथा दूसरों की मिथ्या तो समझ लें हम वीतराग-मार्ग से भटक जाते हैं। हमारे हर अभ्यास के साथ समता/वीतरागता जुड़ी रहे, तभी हम परमात्म-पथ पर आगे बढ़ सकेंगे।

श्री प्राज्ञ जैन मित्र मंडल द्वारा आयोजित

इस संगोष्ठी में स्थानकवासी आचार्यश्री पन्नालाल जी महाराज के श्रावक-समाज ने बड़ी संख्या में भाग लिया। मानव मंदिर मिशन, नई दिल्ली का शांत/एकांत वातावरण, मानव मंदिर गुरूकुल के बालकों में ऊंची शिक्षा तथा उन्नत संस्कारों का पूरे समाज मानस पर गहरा प्रभाव था। पूज्य आचार्यश्री रूपचन्द्रजी तथा पूज्या महासती मंजुलाश्री जी के मार्ग-दर्शन में शिक्षा, सेवा, आयुर्वेद तथा योग-विद्या के प्रकल्पों की चर्चा सबके मुख पर थी।

श्रीमती मंजू अग्रवाल का आकस्मिक निधन

स्वर्गीय श्री मांगेरामजी श्री कमलाबाई अग्रवाल के सुपुत्र श्री महेन्द्रजी अग्रवाल की धर्म-पत्नी श्रीमती मंजू अग्रवाल का हृदयाघात से आकस्मिक निधन 19 दिसम्बर 2018 को हो गया। वे 51 वर्ष की थी। वैसे तो कुछ वर्षों से वे अस्वस्थ चल रही थी। किंतु इतनी युवा उम्र में परलोक-यात्रा की कल्पना बिल्कुल नहीं थी। नियमित रोगोपचार के लिए हॉस्पिटल जाते समय श्री महेन्द्रजी के हाथों में ही अचानक लुडक गई। इसीलिए संत-पुरुष कहते हैं-

सांस-सांस में हरि भजो, वृथा सांस मत खोय
क्या जाने इस सांस का आना होय, न होय।

विशेष यह है मानव मंदिर केन्द्र, नई दिल्ली की शिक्षा/सेवा की प्रवृत्तियों के साथ इस परिवार की प्रशंसनीय सेवायें सदा रही हैं। दिवंगत आत्मा की शांति तथा परमात्म-गति के लिए मानव मंदिर मिशन तथा रूपरेखा पत्रिका परिवार की भाव भीनी श्रद्धांजलि।

-मानव मंदिर मिशन साधना केन्द्र हिमालयन योग एवं हॉलेस्टिक लिविंग इंस्टिट्यूट, भीमताल, नैनीताल परिसर में पूज्य गुरुदेव आचार्यश्री रूपचन्द्रजी महाराज के शिष्य अरुण योगी के साथ हैं- बायें से नमन जैन, संतोष शर्मा, स्वामी करुणा मूर्ति, आदित्य मूर्ति, स्वामी तेजोमयानंद, संजय टण्डन, अश्वनी कुमार एवं प्रकाश मूर्ति।

-मानव मंदिर मातृ-सेवा प्रकल्प सरदार शहर, राजस्थान की माताओं को आवश्यक वस्तुएं एवं दवाइयां वितरित करते हुए साध्वी कलकलता जी महाराज, श्रीमती निर्मला पुगलिया, श्रीमती शांती सिर्धी एवं श्रीमती पुष्पा बुच्चा।

-स्वामी विवेकानंद जयंती के शुभ अवसर पर भारत के प्रतिष्ठित संस्थान आई.आई.टी. कानपुर में यौगिक प्रयोग एवं आहार द्वारा शारिरिक एवं मानसिक डिटॉक्स विषय पर बोलते हुए- आचार्यश्री रूपचन्द्र जी महाराज के शिष्य श्री अरुण योगी जी। योगी जी ने यहां पर सबको ब्रह्मक्रिया भी सिखाई।

-कार्यक्रम के पश्चात् छाया चित्र में श्री अरुण योगी के साथ हैं बायें से- श्री विनय कुमार तिवारी- अभियन्ता आई.आई.टी. कानपुर, डॉ. डी.पी. मिश्रा- वैज्ञानिक-एरोस्पेस-इंजिनिरिंग आई.आई.टी. कानपुर, संस्थान के प्रोफेसर एवं छात्र-छात्रायें।

-पूज्य गुरूदेव से आर्शीवाद प्राप्त करते हुए बायें से- श्री मनीष खुल्लर सुप्रसिद्ध कलाकार, श्री आदित्य मूर्ति (मोन्ट्रीयाल), श्री ब्रह्म अग्रवाल (फ्लोरिडा), श्री अरूण योगी, श्री अनिल अग्रवाल (ह्यूष्टन), श्री अजय बंसल (अटॉर्नी जनरल हरियाणा) एवं श्री भरत अग्रवाल (ह्यूष्टन)।

-मातृ-शक्ति फाउण्डेशन के एक कार्यक्रम में मंच पर हैं बायें से- बॉलीवुड-अभिनेता- श्री सुनील शेट्टी, श्री अरुण योगी, शिवनंदिनी साध्वी शक्ति, श्रीमती बालाशर्मा एवं श्रीमती दामिनी सिंह।

-इसी कार्यक्रम में बायें से- श्री अरुण योगी, श्री सुनील शेट्टी, श्रीमती दामिनी सिंह, श्री राजीव कौशिक, शिवनंदिनी साध्वी शक्ति, श्री राजबीर सिंह एवं श्रीमती बाला शर्मा।

P. R. No.: DL(S)-17/3082/2018-20
Rgn. No.: DELHIN/2000/2473
Date of Post : 27-28

SEVA-DHAM Plus

Since 1994

.....The Wellness Retreat

(YOGA, AYURVEDA, NATUROPATHY & PHYSIOTHERAPY)

KH-57, Ring Road, (Behind Indian Oil Petrol Pump), Sarai Kale Khan, New Delhi - 110013
Ph. : +91-11-2632 0000, +91-11-2632 7911 Fax : +91-11-26821348 Mob. : +91-9868 99 0088, +91-9999 60 9878
Website : www.sevadham.info E-mail : contact@sevadham.info

प्रकाशक व मुद्रक : **श्री अरुण तिवारी,** मानव मंदिर मिशन ट्रष्ट (रजि.) के.एच.–57 जैन आश्रम, रिंग रोड़, सराय काले खाँ, इंडियन ऑयल पेट्रोल पम्प के पीछे, पो. बो.–3240, नई दिल्ली–110013, आई. जी. प्रिन्टर्स 104 (DSIDC) ओखला फेस–1 से मुद्रित।

संपादिका : श्रीमती निर्मला पुगलिया